Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-2 | Issue-7 | July-2024 | Page 34-41

हिन्दी कविता-परंपरा में लोकतत्व का आलोचनात्मक अध्ययन

सुधा मिश्रा

शोध विद्यार्थी

कलिंगा विश्वविद्यालय,नया रायपुर (छत्तीसगढ़)

डॉ.अजय कुमार शुक्ल

प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी)

कलिंगा विश्वविद्यालय,नया रायपुर (छत्तीसगढ़)

ajay.shukla@kalingauniversity.ac.in

शोध सारांश - हिन्दी साहित्य के कालजयी बनने तथा लोकव्यापी स्वरूप हेतु उसे लोक से जुड़ना अनिवार्य है।भारतीय साहित्य लोक संवेदना से गहरे तक जुड़ी हुयी है। प्राचीनकाल, मध्यकाल (भक्तिकाल एवं रीतिकाल) एवं आधुनिक युग में लोक का स्वरूप साहित्य की मूल शक्ति रही है। कला सृजन में लोक अनुभव, लोक परंपराओं और लोक से जुड़े विभिन्न आयामों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है।हिन्दी काव्य परंपरा में लोकधर्मी गुणों से परिपूर्ण हिन्दी कविता का विशिष्ट स्थान रहा है। आम जन में ऐसी ही कविता लोकप्रिय होती है।मनुष्य की सर्वोच्च अभिव्यक्ति कविता है।बिना जीवंत यथार्थ के और अपनी स्थानीयता की गहरी रंगत के बिना वह बेजान होती है ।कोई भी कविता सहृदय के दिल को तभी छूती है या पाठक या श्रोता को तभी प्रभावित करती है,जब उस रचना में, उसे अपनी प्रकृति,अपनी बोली-भाषा और अपने भाव मिलते हैं। अच्छी कविता वही है जो लोक के करीब होती है।जो लोक के दुख-दर्द ,हर्ष-विषाद ,आशा-निराशा ,उत्साह एवं आकांक्षा से गुजर कर ही जन्म लेती है।आचार्य शुक्ल के शब्दों में कहें तो उसे 'लोक हृदय की पहचान हो'।प्रस्तुत शोध पत्र में हिन्दी कविता-परंपरा में लोकतत्व का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है।जिसमें हिन्दी साहित्य के आदिकाल से लेकर आधुनिक युग की कविताओं का विश्लेषण करने का प्रयास सम्मिलित है।

बीज वाक्य - हिन्दी काव्य परंपरा, लोक, आदिकालीन काव्य,भक्तिकालीन काव्य,आधुनिक कालीन काव्य

Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-2 | Issue-7 | July-2024 | Page 34-41

प्रस्तावना - मानव जीवन की शाश्वत अभिव्यक्ति का नाम है- साहित्य ।साहित्य की लोकप्रिय विधा में कविता का स्थान सर्वोपरि है।मनुष्य अपने भाव एवं विचारों को अभिव्यक्त करने या महसूस करने में कविता के अपने सबसे निकट पाता है।हिन्दी काव्य परंपरा की शुरुआत से ही हिन्दी भाषा जनभाषा के रुप में अभिव्यक्ति का माध्यम बनी है।आदिकाल से लेकर आधुनिक युग तक भाषा ,शिल्प आदि में अनेक बदलाव हुए हैं किन्तु शुरुआत से ही लोकधर्मिता कविता की प्रमुख प्रवृत्ति रही है।जो कविता लोक के करीब है और जिनमें लोकतत्व का समावेश होता है।वह कविता न सिर्फ जनजीवन में लोकप्रिय होती है बल्कि कालजयी हो जाती है और साहित्य के इतिहास में अमर हो जाती है।

1. काव्य - लोक का जीवन दर्पण ;-

अपने जन्म से ही मानव खुद के भाव अभिव्यक्त करने की बहुत सारी चेष्टाएँ करता रहता है। अभिव्यक्ति के प्रयासों का विकसित रुप से ही कला और साहित्य का जन्म हुआ। कलाओं में काव्य कला को जीवन का पर्याय माना गया। मन के हर्ष उल्लास, राग-विराग को जब भी शब्द मिले, कविता का जन्म हुआ। कविता, कवि के व्यापक अनुभव का ठोस दस्तावेज होता है। इस अनुभव को सर्वप्रथम, वह अपने आस-पास के परिवेश, समाज, लोक संस्कृति और संस्कार, प्रकृति तथा मानवीय व्यवहार आदि से प्राप्त करता है। वह यथार्थ को अपनी आंखों से देखता है, उसकी चुनौतियों से दो-चार होता है और इस मुठभेड़ की खुशी और उल्लास को या फिर भय और संशय को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। उसकी कविता में मानव जुड़ा होता है जो अपने पूरे समय को प्रतिविम्बित करता है। इसीलिये "विद्वानों ने काव्य को 'लोक' का जीवन दर्पण कहा है, जिसका सीधा सा अर्थ यह है कि लोक ही साहित्य के माध्यम से व्यक्त हुआ है। संस्कृति हो या साहित्य उसका मूल संबंध लोक से हुआ करता है।" (1)

2.हिन्दी कविता और लोकतत्व :-

हिन्दी साहित्य की एक विशेषता यह है कि "उसका आरंभ लोक भाषा में लोक संस्कृति और जनभावनाओं की अभिव्यक्ति से होता है। जनजीवन और जनसंस्कृति की उपज होने के कारण हिन्दी साहित्य का विकास संस्कृत काव्य, काव्यशास्त्र और अभिजात संस्कृति की परंपरा से काफी कुछ स्वतंत्र रूप से हुआ है। हिन्दी साहित्य के आदिकाल और भक्तिकाल में जिन अनेक रचना प्रवृत्तियों और काव्यरूपों का विकास हुआ उनका मूल स्त्रोत संस्कृत काव्यपरंपरा में नहीं जनसंस्कृति और जनसाहित्य में था।" (2) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भी जनसंस्कृति को ही समाज की वास्तविक और जीवंत संस्कृति मानते हैं। वे साहित्य में जनसंस्कृति के अध्ययन की आवश्यकता महसूस करते हुये कहते हैं "साहित्य के इतिहास में इन सांस्कृतिक चिह्नों (गाँव में मिलने वाले) की कोई चर्चा न आना क्षोभ का विषय है। हमारी भाषा में इनकी स्मृति है, हमारे जीवन में इनका पदचिह्न है। हमारी चिंताधारा में इनका कोई स्थान होगा ही नहीं यह कैसे मान

Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-2 | Issue-7 | July-2024 | Page 34-41

लूं।" (3)इसी प्रकार 'लोक जीवन और साहित्य' में डॉ० रामविलास शर्मा लोकतत्वों की प्रमुखता देने हेतु कहते हैं कि "किसी समय का साहित्य उस समय के संसार और समाज के प्रति प्रचलित धारणाओं से अछूता नहीं रहता। लोक जीवन का साहित्य में उल्लेख होना अनिवार्य है। (4)

हिन्दी कविता भी अपनी लंबी विकास परंपरा में लोकतात्विक प्रवृत्तियों से लगातार पुष्ट होती रही है। आदिकाल से ही लोक से जुड़ी हुई कविताएँ स्थापित हुई हैं एवं क्रमशः विकसित होती चली गयी है। आदिकाल में "इस काल का साहित्य स्पष्टतः राजा, धर्म और लोक के तीन आश्रयों में विभाजित हो चुका था, इनकी भाषाएं भी प्रायः निश्चित हो चुकी थी। संस्कृत-प्रधानता राजप्रवृत्ति को सूचित करती थी, अपभ्रंश धर्म की भाषा वन गयी थी तथा "हिन्दी जनता की मानसिक स्थितियों एवं भावनाओं का प्रतिनिधित्व कर रही थी।" (5) आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने अपभ्रंश के समानांतर विकसित देशी भाषा काव्य के बारे में लिखा है- "इतना अनुमान तो किया ही जा सकता है कि प्राकृत पढ़े हुये पंडित ही उस समय कविता नहीं करते थे। जनसाधारण की बोली में गीत, दोहे आदि प्रचलित चले आते रहे होंगे, जिन्हें पंडित लोग गंवारू समझते रहे होंगे।" (6)वास्तव में यह 'गंवारू' समझे जाने वाला साहित्य ही लोक का प्रतिनिधित्व करता है। जिसने संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश की अपेक्षा जन साधारण में अत्याधिक लोकप्रियता अर्जित किया और 'जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब (7) बना। दरअसल 'आचार्य शुक्ल का 'लोक' समाज का ही दूसरा नाम है और यह लोक उनके इतिहास में आदि से अंत तक मौजूद है। वे 'लोक मंगल' की कसौटी पर कसकर ही रचना और रचनाकारों का मूल्यांकन करते थे ।" (8)

शायद इसीलिये आचार्य शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के विकास में लोक संस्कृति और लोक साहित्य के योगदान पर मूल्यांकन किया है और इसके जातीय रूप को उजागर किया है। साहित्य को जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब मानने वाले शुक्ल जी ने लोक संस्कृति और लोक साहित्य को महत्वपूर्ण माना है। मैनेजर पाण्डेय के शब्दों में 'साहित्य के इतिहास को अगर जनता के भावों, विचारों, आकांक्षाओं और कल्पनाओं का इतिहास बनाना है तो उसके लिये केवल शिष्ट साहित्य पर ही ध्यान केन्द्रित करना उचित नहीं है, जनजीवन में व्याप्त लोक साहित्य का अनुशीलन भी जरूरी है।" (9)दरअसल उस समय का शिष्ट साहित्य संस्कृत में रचा जा रहा था। अपनी दुरूहता एवं लोक के दूर होने के कारण वह लोक से इतर दरबारी भाषा बन चुकी थी। या यों कहें कि शिष्ट, विद्वान और पंडितों तक ही इसकी पहुंच थी इसलिये "सम्राट हर्षवर्धन का दरबार संस्कृत के कवियों और पण्डित से भरा था, किंतु राजपूतों की राजधानियां स्थापित होने के पश्चात् लोक भाषा का आदर बढ़ने लगा।" (10)

3.हिन्दी साहित्य का आदिकाल और लोकतत्व

Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-2 | Issue-7 | July-2024 | Page 34-41

हिन्दी का विकास एक जनभाषा के रूप में हुआ संस्कृत के कवियों एवं लेखकों को तत्कालीन परिस्थितियां अधिक प्रभावित नहीं करती। वे काव्य और शास्त्र के विनोद में ही अपनी रचनात्मक प्रतिभा का उपयोग कर रहे थे। प्राकृत तथा अपभ्रंश के कवि एवं लेखक धर्म प्रचार में लगे हुये थे। साहित्य तत्व उनकी रचनाओं का सहायक अंग था। केवल हिन्दी ही इस काल की ऐसी भाषा थी जिसमें तत्कालीन परिस्थितियों की प्रतिक्रिया प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में मुखर हो रही थी।" (11)

दरअसल आदिकाल का हिन्दी साहित्य "एक विशाल क्षेत्र की अनेक बोलियों से विकसित हो रहा था, वह मिथिला से मेवाड़ तक की व्यापक जनभाषा बनकर जन-मानस को प्रभावित कर रहा था। जनभाषा के प्रयोग की यह प्रवृत्ति धीरे-धीरे जन-जीवन के सभी रूपों को प्रस्तुत करने में समर्थ होती जा रही है। सिद्धों को जीवन दृष्टि तथा स्पष्टवादिता, नागपन्थियों का हठयोग, जैनों की अहिंसा, चारण-भाटो की प्रशस्तियां, खुसरों की पहेलियों में लोकतत्व विद्यमान थे। इसमें तत्कालीन जीवन, भाव-भूमि का साथ देने वाली शब्दावली सरल रूप में भी सशक्त होती जा रही थी।" (12)अपभ्रंश के समानांतर जनभाषा के रूप में विकसित हिन्दी भाषा के इस साहित्य की मुख्य प्रेरणा लोक थी। लोक की आवश्यकता के फलस्वरूप लोक की समझ में लोक के लिये साहित्य रचित हुआ जो कालांतर में क्रमशः विकसित होता चला गया।

4.हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल और लोकतत्व

आदिकाल के पश्चात् भक्तिकाल में साहित्य की भाषा ब्रज, अवधी, मेवाड़ी, राजस्थानी आदि लोकभाषाओं में कवियों ने अपने अभिव्यक्ति के स्वर दिये। उपर्युक्त लोकभाषाएं हिन्दी का आधार बनी, जिसमें लोकमन- अपने भाव और अपने अनुभव महसूस कर रहा था।भक्तिकाल में तुलसी का 'रामचरितमानस' में जहाँ राम को लोक भूमि पर स्थापित किया गया। वहीं कबीर के दोहे लोक सुधार को प्रेरित करते हुये लोक मानस को आज तक प्रभावित कर रही है। सूर का वात्सल्य भाव, जिस से लोकमन आज भी प्रफुल्लित हो उठता है। जायसी का पद्मावत् आदि भक्तिकाल के विविध साहित्यिक ग्रांथों में लोकतत्व सर्वत्र विद्यमान दिखलायी पड़ता है। डॉ. रामविलास शर्मा के शब्दों में -"सूर और तुलसी नसी ने लोक संस्कृति के आधार पर ग्राम जीवन के अनुपम चित्र प्रदान किये हैं.....। जबकि जायसी की महत्ता इस बात में है कि वह अवध की धरती, वहां की जन संस्कृति वहां की बोली वाणी के सबसे निकट है. लोक संस्कृति में कितना सौंदर्य है, शक्ति है, उससे कविता में कैसे जान पड़ जाती है यह हम जायसी से सीख सकते हैं।" (13)

5.हिन्दी साहित्य का रीतिकाल और लोकतत्व

आदिकाल और भक्तिकाल के पश्चात् रीतिकाल में कविता एक बार पुनः एक रस दिखलायी पड़ती है। आलंकारिकता, नायिका भेद, चमत्कारिता और पाण्डित्य प्रदर्शन के भाव के कारण वह पुनः लोक से हटकर

Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-2 | Issue-7 | July-2024 | Page 34-41

दरबारी कविता बन जाती है। यह कहना भी उचित होगा कि "रीतिकाल की कविता के रीतिबद्ध होने का एकमात्र कारण लोक के यथार्थ से उसका कट जाना है। (14)किन्तु रीतिकाल में कुछ कवियों खासतौर से बिहारी और घनानंद की रचनाओं में लोकधर्मी प्रवृत्तियां दिखलायी पड़ती हैं।रीतिमुक्त काव्यधारा की कविताओं में पाण्डित्य की प्रवृत्ति न होकर लौकिक प्रेम की यथार्थ प्रस्तुति से यह पाठक वर्ग को प्रभावित करती है।जिन कविताओं में लोकतात्विक प्रवृत्ति दिखलाई पड़ती है।वह कविता ही अपनी पहचान बनाए रखने में कामयाब रही है।

6.आधुनिक काल और लोकतत्व:-

आधुनिक हिन्दी कविता में भारतेन्दु हरिशचंद्र ने रीतिबद्धता की लीक से हटकर कविता को पुनः लोकतत्वों से समाहित किया। "भारतेन्दुकाल में राष्ट्रीय नवजागरण के साथ जनसंस्कृति से जुडकर हिन्दी साहित्य में जो बहुत कुछ स्वतंत्र और नया विकसित हुआ है। यह लोक संस्कृति की देन है। (14)"भारतेन्दु की दृष्टि साहित्य को लोकप्रिय और व्यापक बनाने की ओर थी, साहित्य के लोक रूपों को अपनाकर जनपदीय भाषाओं में साहित्य रचने पर उन्होंने जोर दिया।" (15) भारतेन्दु की लोकप्रियता का कारण यह है कि उन्होंने समाज और साहित्य की आवश्यकताओं को पहचाना उन्हें पूरा किया।"(16) भारतेन्दु काल में भारतेन्दु और उनके युग के कवियों ने सामाजिक सुधार, देश प्रेम, प्रकृति, जनजीवन और उससे जुड़ी समस्याओं पर लिखना प्रारंभ किया और हिन्दी भाषा के खड़ी बोली के साहित्यिक आधार में इन सभी का महत्वपूर्ण योगदान है।

भारतेन्दु युग के पश्चात् द्विवेदी युग में लोकभाषा हिन्दी और परिष्कृत हुयी। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने कविता को ब्रज भाषा से निकालकर हिन्दी भाषा में प्रतिष्ठित किया। द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि मैथिलीशरण गुप्त ने लोक की प्रवृत्तियों और उसके अंगों को अपनी रचनाओं में अविष्कृत कर उसे सामाजिक शक्ति बनाकर प्रस्तुत किया। द्विवेदी युग की कविताओं में लोक जीवन, लोकसंस्कार आदि पर ढेरों कविताएँ लिखी गई। द्विवेदी युग में भावी पीढ़ी के कवियों के लिये खड़ी बोली का एक नया प्लेटफार्म मिला जिससे वह वृहद जनमानस के बीच अपनी वाणी का संचार कर सकें।

द्विवेदी युग के पश्चात आधुनिक हिन्दी कविता में छायावाद साहित्य की मुख्यधारा लोकतात्विकता नहीं थी। दरअसल "छायावादी काव्य शिष्ट साहित्य का प्रतिबिम्ब था" (17)स्थूल से सूक्ष्म भाव, अनुभूति की प्रधानता, रहस्यवाद आदि इस काव्य की प्रधानता थी फिर भी छायावाद में जहाँ जयशंकर प्रसाद ने हिन्दी साहित्य में लोक जीवन की प्रतिष्ठा की है वहीं दूसरी ओर निराला जी ने "वह तोड़ती पत्थर" में श्रमिक जीवन को काव्य में नायकत्व प्रदान किया। ग्राम्य जीवन, प्रकृति चित्रण और लोक संस्कार के भाव छायावाद में कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त हुई है।

Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-2 | Issue-7 | July-2024 | Page 34-41

छायावाद के पश्चात् प्रगतिवाद और प्रयोगवादी काव्य आंदोलन कविता की लोकोन्मुखता को ही केन्द्र में रखकर आगे बढ़े हैं। ग्रामीण संदर्भों को प्रगतिवाद में स्थान मिला। प्रगतिवाद में लोक का आग्रह आरोपित था जो छायावाद के विरोध में आया था प्रगतिवाद में मार्क्सवादी दर्शन के प्रभाव से सामाजिक चेतना और भावबोध का अपना लक्ष्य बनाया। इस आंदोलन का नायक सर्वहारा वर्ग था। प्रगतिवाद में सामाजिक यथार्थ की पूर्ण अभिव्यक्ति हुई और लोक से जुड़ाव शनैः शनैः बढ़ता ही चला गया।

तारसप्तक के प्रकाशन के बाद प्रयोगवादी कवियों ने अज्ञेय के नेतृत्व में काव्य प्रयोग की जो नयी जमीन तलाश की उसमें काव्य के पारंपरिक प्रतिमानों से विद्रोह की भावना के केन्द्र में भी कला की लोकोन्मुखता है। प्रयोगवाद के विषय वस्तु में ग्रामीण संदर्भ उपस्थित नहीं था। बिम्ब, प्रतीक, भाषा के धरातल पर ही लोकोन्मुखता आयी। अज्ञेय ने नये-नये प्रतीकों का आग्रह किया फिर भी प्रयोगवादी कवि जमीन से न जुड़ सके। उन्होंने प्रगतिवादी शिल्प एवं संवेदना में ही घात लगाना प्रारंभ किया। अलंकारों का नया विधान बनाया, उपमानों को माँजा गया, उत्प्रेक्षाओं को भावों से जोड़ा गया, लोक लयों को स्वीकृत किया गया।

फिर भी मध्यवर्गीय जीवनानुभवों के बावतजूद अधिकांश प्रयोगवादी कवि लोकतात्विक प्रतिमानों की ओर आकर्षित हुये हैं। लोक जीवन के अनुभव और परंपराएं, लोक संस्कृति, लोकचेतना, लोक मानस आदि के बिंब कविताओं में दिखलायी पड़ते हैं। यह भी कहा जा सकता है कि कवि, कलाकार और बुद्धिजीवी अधिकतम मध्यवर्गीय होते हैं, किन्तु सामाजिक परिप्रेक्ष्य में इनका जीवनसूत्र कहीं न कहीं लोक से जुड़ा होता है, इसीलिये इनकी रचनात्मक अभिव्यवित्तयों में अपने वर्गीय अनुभवों के बीच लोकधर्मी प्रेरक सूत्र निहित होते हैं। स्पष्ट है कि प्रगति प्रयोगवादी कवियों की मध्यवर्गीय मानसिकता में लोकधर्मी जीवनतत्व और लोकोन्मुख प्रतिमान स्थापित है।

इसके पश्चात प्रयोगवादी परिधि का अतिक्रमण कर नयी कविता का आंदोलन लोकतात्विक प्रवृत्तियों की ओर आकर्षित होता रहा है। नयी कविता के कवि लोकजीवन के बहुआयामी संकेतों को अत्यंत सहजता से अपनाते रहे हैं। नयी कविता की कविताओं में लोकजीवन को देखने का एक अलग और नया अंदाज था। जहाँ रोजमर्रा के साधारण सी दिखने वाली चीजें और साधारण से भाव पर भी कविताएँ लिखी गई हैं। यह काव्यधारा भी लोकतात्विक प्रवृत्तियों से लगातार पुष्ट होती रही है।नयी कविता के पश्चात् अकविता काल की कवितों में विद्रोह और निषेधात्मक प्रवृत्तियों के परिणाम स्वरूप लोकतात्विक प्रवृत्ति शिथिल प्रतीत होती है। किंतु आठवें दशक में पुनः जनवादी विचारधारा की और फिर विशेष तौर से नवें दशक और उसके बाद आज की कविता में जनपदीय चेतना काव्य का मुख्य आधार बनी।

निष्कर्ष -

Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-2 | Issue-7 | July-2024 | Page 34-41

अतएव यह कहना उचित होगा कि हिन्दी कविता परंपरा में प्रारंभ से ही लोकतत्व की झलक दिखलायी पड़ती है। बिना लोकतात्विक आधार वाले साहित्य की विधा का समाज में कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं बन पाया है। किसी भी देश के साहित्य, इतिहास में लोकतात्विक गुणों वाली रचना ही कालजयी होती है क्योंकि वह वहां की सभ्यता, संस्कार और लोकजन के जीवन को अभिव्यक्त करती है। हिन्दी साहित्य की कविता-परंपरा भी लोकतात्विक प्रवृत्तियों से समृद्ध होकर नित नये आयाम ग्रहण कर रही है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि अभिजात संस्कार से हटकर साधारण जनता के भाव, उसके जीवन, संस्कृति, परंपरा का बोध ही लोकतत्व है। लोक साहित्य, लोक कला आदि से प्रेरणा लेकर कविता सदैव उससे जुड़ी हुई है। साहित्य लोक से सदैव प्रभावित होता है और उसे प्रभावित करता है। समकालीन हिन्दी कविता में लोकतत्व के विभिन्न आयामों को ग्रहण किया है और कविता को लोकतात्विक प्रवृत्तियों से समृद्ध किया है।

संदर्भ ग्रंथ-

1. डॉ.महेश चंद्र - आजकल/अक्टूबर 1986/पृ.23
2. डॉ.मैनेजर पांडेय-साहित्य और इतिहास दृष्टि/पीपुल्स लिटरेसी,नयी दिल्ली/पृ.114
3. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी-अशोक के फूल/राजकमल प्रकाशन/पृ.40
4. डॉ.रामविलास शर्मा-लोकजीवन और साहित्य/राजकमर प्रकाशन/पृ.113
5. डॉ.नगेन्द्र- हिन्दी साहित्य का इतिहास/मयूर पेपरबैक ,नोएडा 25वां संस्करण/पृ.59
6. आचार्य रामचंद्र शुक्ल- हिन्दी साहित्य का इतिहास/काशी नागरी प्रचारिणी सभा,काशी,11वां संस्करण/पृ.33.
7. आचार्य रामचंद्र शुक्ल- हिन्दी साहित्य का इतिहास/काशी नागरी प्रचारिणी सभा,काशी,11वां संस्करण/पृ.05
8. डॉ.मैनेजर पांडेय-साहित्य और इतिहास दृष्टि/पीपुल्स लिटरेसी,नयी दिल्ली/पृ.108
9. डॉ.मैनेजर पांडेय-साहित्य और इतिहास दृष्टि/पीपुल्स लिटरेसी,नयी दिल्ली/पृ.116
10. डॉ.नगेन्द्र- हिन्दी साहित्य का इतिहास/मयूर पेपरबैक ,नोएडा 25वां संस्करण/पृ.54-55
11. डॉ.नगेन्द्र- हिन्दी साहित्य का इतिहास/मयूर पेपरबैक ,नोएडा 25वां संस्करण/पृ.41-59
12. डॉ.नगेन्द्र- हिन्दी साहित्य का इतिहास/मयूर पेपरबैक ,नोएडा 25वां संस्करण/पृ.80

Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-2 | Issue-7 | July-2024 | Page 34-41

13. डॉ.रामविलास शर्मा - परम्परा का मूल्यांकन/राजकमल प्रकाशन/पृ.25

14. डॉ.जीवन सिंह - कविता की लोक प्रवृत्ति/अनामिका प्रकाशन,इलाहाबाद/पृ.13

15. डॉ.मैनेजर पांडेय-साहित्य और इतिहास दृष्टि/पीपुल्स लिटरेसी,नयी दिल्ली/पृ.115

16. डॉ.मैनेजर पांडेय-साहित्य और इतिहास दृष्टि/पीपुल्स लिटरेसी,नयी दिल्ली/पृ.106

17. डॉ.लता दूबे - नवगीत का समग्र मूल्यांकन/शोध प्रबंध-रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय,रायपुर/पृ.119